RAJAPPAN.

TCG

आदर्श चरित्र

लेखक

पं. रघुवरदयालु मिश्र

दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा
मद्रास

Price_6 As.

1953

1953 1954

PUBLISHED BY
TRAVANCORE-COCHIN GOVT

M. K. Rajappan

आदर्श चरित्र

लेखक

पं. रघुवरदयालु मिश्र

दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा
मद्रास
1953

विज्ञानपोषिणी प्रेस
कोल्लम

V.K. Rajagopalan
KANNAN
KANNAN
KANNAN
KANNAN
KANNAN
KANNAN

विषय-सूची

राजकुमार ध्रुव

राजकुमार ध्रुव

बहुत पहले हमारे देश में एक राजा थे। उनका नाम था उत्तानपाद। उत्तानपाद के दो रानियाँ थीं—सुनीति और सुरुचि। सुनीति बड़ी थी और सुरुचि छोटी। सुनीति के एक लड़का था। उसका नाम था ध्रुव और सुरुचि के लड़के का नाम था उत्तम। राजा उत्तानपाद अपनी छोटी रानी सुरुचि से ज़्यादा प्रेम करते थे।

सुरुचि ने एक दिन राजा से कहा—"महाराज, आप मुझसे प्रेम करते हैं। मैं कैसे जानूँ कि आपका प्रेम सच्चा है?" राजा ने पूछा—"सुरुचि, तुम मेरे प्रेम की कैसे परीक्षा लेना चाहती हो? मैं क्या करूँ, जिससे तुम्हें मालूम हो कि मेरा

तुमपर सच्चा प्रेम है या नहीं?" राजा की यह बात सुनी तो रानी सुरुचि ने कहा—"महाराज, सुनीति बड़ी है। उसका लड़का ध्रुव भी बड़ा है। इसलिए आपके बाद ध्रुव ही गद्दी का अधिकारी है। जब ध्रुव राजा होगा तब वह उत्तम को अपना दास बनाएगा। मुझे भी दासी ही बनकर रहना होगा। क्या यही है आपका प्रेम? आपके प्रेम का क्या यही फल मुझे मिलेगा?"

राजा सुरुचि की बात का मतलब समझ गये। उन्होंने कहा—"सुरुचि! ध्रुव भी तुम्हारा ही पुत्र है। सुनीति की कोख से उसका जन्म हुआ है तो क्या हुआ? वह बड़ा सीधा और भोला-भाला है। और, अभी तो वह बिलकुल नन्हा-सा बालक है। इन बातों को क्या समझे? तुम अभी से क्यों ऐसी आशंका करती हो?"

सुरुचि बोली—"महाराज, आप क्या समझें? अधिकार ऐसी वस्तु है कि उससे सीधे भी टेढ़े हो जाते हैं। अभी जो भोला-भाला तथा नासमझ है, कल वही चतुर कूट-विचारवाला शासक हो जाएगा। मुझे उसपर विश्वास नहीं है। अगर विश्वास हो भी तो मैं अपना और अपने पुत्र उत्तम का

भविष्य ख़तरे में क्यों डालूँ? इसीलिए आपको इसका फ़ैसला आज ही करना होगा।"

सुरुचि की बात सुनकर राजा बहुत दुखी हुए। उन्होंने हर तरह से उसे समझाया। पर सुरुचि ने एक न मानी। आख़िर राजा ने पूछा—"क्या चाहती हो तुम? मुझसे क्या कराना चाहती हो? मैं क्या करूँ?"

सुरुचि ने कहा—"आज ही सुनीति को राजमहल से निकाल दीजिये और दासियों के साथ रहने को उसे अलग मकान दे दीजिये। उसे दास-दासियों की आवश्यकता नहीं। वह अपना काम खुद कर लेगी। उसको सादे कपड़े और साधारण भोजन दिया जाय।"

राजा ने कहा—"सुनीति बड़ी धर्मात्मा है। बड़ी दयालु है। तुमसे बड़ा प्रेम रखती है। उसने ऐसा कोई अपराध नहीं किया है जिसके लिए उसे यह दंड दिया जाय। सुरुचि, तुम उसके साथ बड़ा अन्याय करती हो। मैं ऐसा अधर्म का काम नहीं करूँगा।"

सुरुचि ने राजा की बात सुनी तो उसे गुस्सा आ गया। उसने कहा—"राजन्, अगर आप मेरी बात नहीं मानते

मेरी इच्छा को पूरा नहीं कर सकते तो आपने मुझसे विवाह ही क्यों किया था? अगर आपको मेरे मान अपमान का ख्याल नहीं है तो मैं जीवित नहीं रहना चाहती । मैं आत्म-हत्या कर लूँगी ।"

सुरुचि की बातों ने राजा पर वज्र गिरा दिया । वे घबरा गये और सोचने लगे कि अगर सुरुचि ने आत्महत्या कर ली तो संसार मुझे पत्नी-घातक कहेगा ; अगर मैं इसकी बात

मानकर सुनीति को घर से निकाल दूँ, तो भी संसार को मैं किस तरह मुँह दिखाऊँगा? राजा इस दुविधा में पड़े हुए

थे। उत्तम उनकी गोद में था। उसी वक्त ध्रुव भी बाहर से दौड़ता हुआ आया और पिता की ओर बढ़ा। उसने चाहा कि वह भी पिता की गोद में बैठ जावे।

राजा उत्तानपाद सुरुचि की बातों से बहुत दुखी थे। उन्होंने ध्रुव की तरफ़ ध्यान नहीं दिया। उसको प्यार नहीं किया। उसे उठाकर अपनी गोद में नहीं बिठाया। सुरुचि पास ही खड़ी थी। उसे बड़ा घमंड था। वह सौतिया डाह से जल भी रही थी। उसे ध्रुव का आना अच्छा न लगा। जब उसने उसे पिता की गोद की ओर बढ़ते देखा तब वह बोल उठी—"बेटा, तू अपने पिता की गोद में नहीं बैठ सकता। इसमें उत्तम ही बैठ सकता है। तू राजा का लड़का हुआ तो क्या हुआ? राजा के तो ऐसे कई तरह की स्त्रियों से लड़के होते हैं। पिता की गोद तो राजकुमार को ही मिलती है। उसीको सिंहासन भी मिलता है। तू मेरी कोख से पैदा नहीं हुआ है। मेरी कोख से उत्तम ही पैदा हुआ है। मैं राजकन्या हूँ। मैं राजरानी हूँ। तेरी माँ न मालूम कौन है? अगर तू मेरी कोख से जन्म लेना चाहता है और पिता की गोद में बैठना चाहता है तो जा, सात जन्म तपस्या कर, जिससे दूसरा जन्म

राजकन्या की कोख से मिले; तेरी अभी की माँ राजकन्या नहीं है। जा, चला जा यहाँ से।"

बालक ध्रुव छोटा था, पर था बड़ा स्वाभिमानी। माता सुरुचि की बात उसे बड़ी बुरी लगी। राजा उत्तानपाद भी चुपचाप बैठे रहे, इसे भी ध्रुव ने देखा। यह उसे बहुत बुरा लगा, उसके स्वाभिमान को धक्का लगा। वह क्रोध से फुफकारने लगा, जैसे काला नाग डंडे की मार खाकर फुफकारने लगता है। उसकी साँस बड़ी जल्दी जल्दी चलने लगी। उसकी आँखें लाल हो गयीं। उसके होंठ फड़कने लगे। आँखों से आँसुओं की धार बहने लगी। वह दौड़ता हुआ अपनी माँ के पास गया, और उसकी गोद में मुँह छिपाकर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा।

माता ने ध्रुव को गोद में उठा लिया। उसके आँसू पोंछे और उसे चुमकारा-पुचकारा। पर बालक सिसक-सिसककर रोता ही रहा। महल के दूसरे लोगों ने सुरुचि की सब बातें उससे कहीं। उन बातों को सुनकर सुनीति भी रोने लगी। उसने कहा कि पुरुष कितना भी न्यायी हो, अगर वह कमज़ोर है, अगर वह अपनी स्त्री का गुलाम है, अगर वह न्याय और अन्याय में फ़र्क नहीं कर सकता,

सुनीती का पुत्र ध्रुव है

अगर वह न्याय पर ज़ोर नहीं दे सकता तो ऐसे पुरुष के ईश्वर भी रक्षक नहीं हो सकते। ध्रुव का मुख चूमते हुए उसने कहा—"बेटा! तू किसीका बुरा मत सोच। जो दूसरों का बुरा विचारता है, उसका फल उसके लिए बुरा होता है। मनुष्य भले ही न्याय और अन्याय के प्रति अंधा हो जाय, पर ईश्वर सब कुछ देखते हैं। सुरुचि ने ठीक ही तो कहा है। महाराज आज क्यों मुँह खोलकर सुरुचि से कुछ नहीं कह सकते? उन्हींने तो हम दोनों के बीच भेद पैदा किया है। उन्हींने तो उसको सिर चढ़ाया है। जब वे मेरा तिरस्कार करते हैं तो सुरुचि भी मुझे दासी और तुझे दास बनाना चाहती है। इसमें आश्चर्य ही क्या? मैं अभागिनी हूँ। मेरे गर्भ से तेरा जन्म हुआ है। मेरे दूध को तूने पिया है, उससे तू पला है। अगर तू पिता की गोद चाहता है, अगर तू सिंहासन चाहता है तो सुरुचि की बात मान। उसने ठीक ही कहा है। तू तपस्या कर। तू भगवान की आराधना कर। भगवान बड़े दयालु हैं। वे सच्चे हैं। वे सत्य-स्वरूप हैं। तू उस सत्य-स्वरूप भगवान को अपने हृदय में बसा ले। तू इस सिंहासन का, इस पिता की गोद का मोह छोड़ दे और सत्य की खोज में जा। तुझे भगवान

मिलेंगे । तुझे यह गोद और सिंहासन क्या, भगवान की ही गोद और उनका सिंहासन आसानी से मिलेगा ।"

माता सुनीति की बातें ध्रुव ने ध्यान से सुनीं । उसकी समझ में आया कि यह सिंहासन झूठा है, पिता की गोद झूठी है । यह तो माता सुरुचि के घमंड की छाया है, मोह की छाया है । उसे माता सुनीती की बात ठीक मालूम हुई । उसने दृढ़ निश्चय किया कि सत्य की खोज करूँगा । सत्यस्वरूप भगवान की आराधना करूँगा । यह सब विचारकर वह माता को प्रणाम कर घर से चल पड़ा ।

घूमते-घूमते नारद जी भी उधर आ निकले और ध्रुव को

रास्ते में मिल गये। उन्होंने एक नन्हे से बालक को अकेले जाते देखा तो पूछा—"बच्चे, कहाँ जा रहा है?"

ध्रुव ने कहा—"सत्यस्वरूप भगवान को ढूँढ़ने जा रहा हूँ।"

नारद ने फिर पूछा—"अरे अबोध बालक, कभी सत्यस्वरूप भगवान को तूने देखा भी है कि ढूँढ़ने ही जाता है? वह कहाँ रहता है? कैसा है वह?"

ध्रुव ने कहा—"सो तो मैं कुछ नहीं जानता। मेरी माता सुनीति ने कहा है, तू तपस्या कर, तुझे सत्यस्वरूप भगवान मिलेंगे। मेरी छोटी अम्माँ ने भी कहा कि तपस्या कर। मुझे विश्वास है कि मैं तपस्या करूँगा तो भगवान ज़रूर आएँगे। वे बड़े दयालु हैं।"

नारद ने कहा—"बेटा! अभी तू बिलकुल नन्हा-सा है। तू तपस्या का मरम्र क्या जाने? तू अपने घर रह। अपनी माता की गोद में खेल। तपस्या तुझसे नहीं होगी। वह बहुत कठिन चीज़ है।"

ध्रुव ने कहा—"महाराज, आप कौन हैं जो मुझे इस प्रकार कमज़ोर बनाते हैं। मैं क्षत्रिय बालक हूँ। मेरी माँ क्षत्रिय कन्या है। मेरे लिए कोई काम कठोर नहीं है। मुझे

अपना और अपनी माता का मान रखना है। मेरी छोटी माता सुरुचि ने मुझे मेरे पिता की गोद में बैठने नहीं दिया। क्या यह मेरा अपमान नहीं है? मैं अपनी छोटी माँ, पिता और भाई से द्वेष नहीं करता। मैं उनसे प्रेम ही करता हूँ। मेरी माता ने कहा है—सत्यस्वरूप भगवान की आराधना करने से पिता की गोद पा सकता हूँ। मैं इसीलिए अपनी माता से उपदेश लेकर आया हूँ। मेरी माता ने कहा है कि भगवान सत्यस्वरूप हैं। मैं उन्हींको ढूँढ़ने जा रहा हूँ। वे मुझे ज़रूर मिलेंगे।"

नारद जी बोले—"तेरी उम्र अभी बहुत छोटी है। इस उम्र में तू अपनी माता की बात को अपमान मानता है; यह ठीक नहीं। इससे मालूम होता है कि तू असंतुष्ट है। असंतोष से अज्ञान पैदा होता है। अज्ञान से बुद्धि का नाश होता है, भले बुरे का विचार नहीं रहता। मनुष्य को चाहिए कि जो उसे ईश्वर ने दिया है उससे संतोष करे, तू भगवान की तपस्या करना चाहता है। जब तक तुझमें इस बात का ज्ञान रहता है कि यह भला है और यह बुरा है—जब तक मन में भेद-भाव रहता है, तब तक सच्चा ज्ञान नहीं होता। जब मनुष्य के मन में 'यह चाहिए, यह नहीं

चाहिए' का इच्छा-भेद रहता है तब तक सच्चा ज्ञान नहीं होता और जब तक मनुष्य आसक्ति से दूर नहीं होता तब तक वह भगवान की आराधना, भक्ति और पूजा सच्चा मन लगाकर नहीं कर सकता।

"भगवान ने मनुष्य को जो कुछ दिया है उससे उसे संतोष करना चाहिए। अगर उसे अपने से अधिक गुणवान मिले, अधिक विद्वान मिले तो खूब खुश होना चाहिए। उसका अधिक मान-सम्मान करना चाहिए, उसे प्रसन्न रखना चाहिए। अगर अपने से कम गुणवान मिले, कम विद्वान मिले, या निर्धन मिले तो उसपर दया दिखानी चाहिए। अगर कोई बराबर का हो, उमर में बराबर हो, धन में, गुण में या विद्या में बराबर हो तो उसे मित्र माने, उससे प्रेम करे। ऐसा करने से मनुष्य के अंदर अहंकार नहीं पैदा होता। दुख नहीं पैदा होता।

अरे बालक, तू तो सिंहासन चाहता है, पिता की गोद की इच्छा रखता है। तेरा तो यह व्यर्थ का हठ है। तू घर लौट जा। जब तू बड़ा हो जावे—संसार के सब सुखों का अनुभव कर चुके, जब तुझे भगवान की भक्ति की सच्ची इच्छा पैदा हो तब तू इस ओर आना। अभी तेरा यह समय भगवान के लिए तपस्या करने का नहीं है। तू अभी घर लौट जा।"

ध्रुव ने कहा—"भगवान आपने मुझपर बड़ी कृपा की है। मेरा मन सुख और दुख के विचार से चंचल हो गया था। मैं दुखी हुआ था, और सुख—परम-सुख पाने की इच्छा से व्याकुल हो उठा था। अब आपके इस उपदेश ने मेरे मन को बहुत शांत कर दिया है। मैं तो अभी अबोध हूँ। ज्ञान की ये गहरी और बड़ी-बड़ी बातें क्या समझूँ? मैं जन्म का क्षत्रिय हूँ, इसलिए मैं उत्तेजित हो गया हूँ। मैं उद्दण्ड हूँ। मुझे क्षमा कीजिये। मुझे ज्ञान का रास्ता बताइये।"

नारद जी बोले—"बेटा! तू अब घर जा। माता के पास रह। मैंने जो बातें कही हैं उन्हें अपनी माँ से कह। तेरी माता तुझे रास्ता बतायेगी।"

बालक ध्रुव ने मुनि की ये बातें सुनीं। उसके मन में दुविधा पैदा हो गयी। माँ की बातें सुनने के बाद उसने समझा कि सिंहासन झूठा है। अब नारद जी फिर वहीं वापस जाने को कहते हैं। माँ ने तपस्या करने को कहा। मुनि कहते हैं, तपस्या बहुत कठिन चीज़ है। एक तरफ़ माँ की बात, दूसरी तरफ़ मुनि का उपदेश। माँ की बात टाले या मुनि की! बेचारा बालक इसी दुविधा में खड़ा रह गया। उसको ऐसा खड़ा देखकर नारद ने पूछा—"क्यों बेटा! क्या सोच रहा है?

ध्रुव बोला—"मुनिवर्य! मेरे लिए माता का वचन ही सब कुछ है। मगर मैं आपकी बात भी नहीं टाल सकता। उधर माँ और इधर गुरु के समान आप। मैं क्या करूँ, यही सोच रहा हूँ।"

बालक की यह बात सुनकर नारद जी बोले—"बच्चे! माता सब देवी-देवताओं से बड़ी होती है। उसकी बात का पालन करना ही चाहिए। मगर तू क्षत्रिय राजकुमार है। प्रजा का पालन करना तेरा धर्म है। दुष्ट-शिक्षण और शिष्ट-पालन तेरा कर्तव्य है। इसके लिए आवश्यक शिक्षा पाकर अपना कर्तव्य निर्वाह करना सीख। बाद को तपस्या के लिए जा सकता है। अभी तेरी उम्र इसके योग्य नहीं।"

ध्रुव—"मगर मुनिवर्य! आप ही ने कहा कि तेरी माता तुझे रास्ता बतायेगी, माता सब देवी-देवताओं से बढ़कर है और उसकी आज्ञा का पालन करना चाहिए। मैं क्षत्रिय राजकुमार हूँ। एक बार प्रतिज्ञा करके माता का आशीर्वाद पाकर भगवान की खोज में निकला हूँ, अब मैं पीछे कैसे लौट सकूँगा?"

बालक की बातें सुनकर नारद जी मन ही मन प्रसन्न हुए और कहा—"बेटा! तेरी माता परम साध्वी है। उसने जो रास्ता बतलाया है वही सबसे श्रेष्ठ है। तू भगवान

का चित लगाकर ध्यान कर । बेटा! तेरा कल्याण होगा । यहीं पास में यमुना नदी है। उसके किनारे मधुबन है। वहाँ तू जा। वहाँ नित्य पवित्र यमुना में स्नान करके भगवान का स्मरण कर । ऐसा करने से तेरा मन और चित स्थिर हो जायगा । एक मन हो भगवान का ध्यान करते रहना । फिर तेरा मन शांत हो जाएगा और सत्यस्वरूप भगवान तुझे अवश्य ही दर्शन देंगे । "

नारद का यह उपदेश पाकर ध्रुव बड़ा प्रसन्न हुआ और वहाँ से मधुबन की ओर चल दिया ।

राजा उत्तानपाद को जब मालूम हुआ कि ध्रुव नगर छोड़कर चला गया है, तब उनको बड़ा दुख हुआ । वे अपनी कमजोरी पर पछताने लगे । वे सोचने लगे—'मैंने उसे क्यों नहीं रोक लिया? मैंने स्त्री के वश में होकर यह बड़ा पाप किया है। वह नन्हा-सा बालक वन में! वह थककर गिर पड़ेगा और उसे जंगली जानवर—भेड़िये खा जाएँगे। मैं स्त्री का ऐसा गुलाम बन गया! वह मेरी गोद में ही तो बैठना चाहता था । मैं उसे उठाकर बिठा लेता तो सुरुचि क्या करती? वह बड़ा ही होनहार बालक था । मैंने उसे अपनी बेवकूफ़ी से खो दिया । अब क्या करूँ?'

इस तरह की चिंता में घुल-घुलकर राजा उत्तानपाद ने राजपाट सब कुछ छोड़ दिया । वे हर समय अपने प्यारे पुत्र ध्रुव की ही याद किया करते ।

उधर ध्रुव मधुवन में पहुँचा । यमुना में स्नान किया । रात को उपवास किया और भगवान का ध्यान लगाकर बैठ गया । उसने पहली तीन रात कैथ के फल खाये । दूसरी तीन रात को बेर खाये । वह दिन में भी एक ही समय खाता था । इस तरह उसने एक महीना काटा । दूसरे महीने छः छः दिन के बीच साग-पात खाने लगा । तीसरे महीने नौ-नौ दिन पर सिर्फ़ जल पीकर भगवान का ध्यान किया । चौथे महीने खाना-पीना सब कुछ छोड़ दिया । सिर्फ़ हवा पीकर रहा । वह भी बारह-बारह दिन में एक बार । पाँचवें महीने वह एक पैर पर खड़ा हो भगवान का भजन करने लगा । अब तक उसका चित्त बिलकुल बंध गया था । वह सिवाय भगवान के और किसीकी कल्पना भी नहीं कर सकता था ।

इस प्रकार ध्रुव ने छः महीने कठोर तपस्या की । ध्रुव की इस तपस्या से भगवान बड़े प्रसन्न हुए । उन्होंने मन में कहा—'बालक बहुत छोटा है, पर इसका मन कितना

मजबूत है! कैसा एकाग्र है! इसने जिस बात का निश्चय किया उसके पीछे पूरी शक्ति से लग गया, फल का कोई विचार नहीं किया।' भगवान उसके पास दौड़ आये।

ध्रुव के हृदय में भगवान की मूर्ति थी। आँख खोली तो वही मूर्ति सामने खड़ी है! उसे बड़ा अचरज हुआ। प्रेम से वह रो पड़ा। उसने उठकर साष्टांग नमस्कार किया। भगवान भी उसकी ओर बड़े प्रेम से देख रहे थे। ध्रुव की आँखें भगवान के चरणों पर थीं। हृदय उनके मुख को देख रहा था। दोनों हाथ जुड़े थे। प्रेम और आनंद से बोल नहीं फूट रहा था। भगवान ने वात्सल्य भरा हाथ उसके सिर पर फिराया तो ध्रुव भगवान की स्तुति करने लगा।

(ध्रुव की स्तुति सुनकर भगवान बड़े ही प्रसन्न हुए। और बोले—"तपस्वी राजकुमार! मैं तेरे हृदय की बात जानता हूँ। तेरा कल्याण हो। मैं तुझे ध्रुव-लोक देता हूँ। तू वहाँ सदा सर्वदा सबसे ऊँचा रहेगा। तू अपने पिता के राज्य का सुख भोगेगा। तेरी प्रजा तुझसे सुखी रहेगी। अंत में तू फिर मेरे धाम को पायगा।")

अब ध्रुव के मन से अपनी छोटी माँ के बुरे व्यवहार की बात भूल गयी। उसका मन उसकी ओर से साफ़ हो गया। उसके लिए उसके मन में प्रेम पैदा हो गया। वह उसके सुख की बात सोचने लगा और घर को चल दिया।

महाराज उत्तानपाद छः महीने तक ध्रुव के चले जाने के कारण बड़े दुखी थे। उन्होंने राज-काज में दिलचस्पी लेना छोड़ ही दिया था। आज उनको ख़बर मिली कि ध्रुव वापस आ रहा है। उनकी खुशी का ठिकाना न रहा। उन्होंने अपनी रानियों को यह खुशख़बरी सुनायी तो वे भी बड़ी प्रसन्न हुईं। अब तक सुरुचि को अपनी ग़लती मालूम हो गयी थी। वह भी ध्रुव पर उतना ही स्नेह करने लगी कि जितना उत्तम पर करती थी। उसने सुनीति को साथ लेकर ध्रुव की अगवानी के लिए महल सजाया। दरबार सजाया गया। राजा ने नगर में ख़बर कर दी तो प्रजा ने भी राजकुमार के आने की खुशी में जगह-जगहपर तरह-तरह से अपने दरवाज़े सजाये, तोरण बाँधे, झंडे-झंडियाँ लगायीं। सारा नगर सजा था। नगर-निवासी तरह तरह से अपनी खुशी दिखा रहे थे।

राजा उत्तानपाद अपनी दोनों रानियों, राजकुमार उत्तम, मंत्री और सभासदों को लेकर ध्रुव की अगवानी के लिए चले। ध्रुव भी चलते चलते अपने नगर के पास आ पहुँचा। उसने देखा कि पिता उत्तानपाद और माताएँ चली आ रही हैं। वह दौड़कर पिता के चरणों में गिर पड़ा। उसने उनको नमस्कार किया। उत्तानपाद ने उठाकर उसको गले से लगा लिया। उनकी आँखों से आनंद के आँसू बहने लगे। बाद को ध्रुव ने पहले माता सुरुचि को साष्टांग प्रणाम किया। सुरुचि ने उठाकर उसे गले से लगाया। उसके मन में ग्लानि की पीड़ा थी। वह दुखी थी। मन ही मन उसने ध्रुव से क्षमा माँगी। ध्रुव ने माता के मन के विचारों को उसके चेहरे पर पढ़ लिया और कहा— "माँ, आप क्यों इस प्रकार दुखी होती हैं? आपने तो मेरा बड़ा उपकार किया है। आप ही के कहने से तो मैं भगवान की याद कर सका। उनके ध्यान में लगा। उनके दर्शन पा सका। आपका डाँटना ही मेरे लिए आशीर्वाद साबित हुआ। अगर आप मुझसे प्रेम कर लाड़-प्यार के साथ घर में ही रखतीं, तो मेरा ऐसा कौन-सा भाग्य था? ऐसा कौनसा पुण्य था, जो मैं भगवान के दर्शन कर सकता? माता जी! बड़ों

के वचन में, उनकी डाँट-डपट में ही छोटों की भलाई छिपी रहती है। यह रहस्य मैंने भी जाना है। इसलिए माता जी, आप किसी प्रकार दुखी न हों। आपने तो मेरा बड़ा उपकार ही किया। मैं आपका बड़ा ही कृतज्ञ हूँ।"

ध्रुव की नम्रता, उसकी शालीनता देखकर सुरुचि बड़ी ही शर्मिंदा हुई। वह तो दबी जा रही थी। सुनीति ने आगे बढ़कर उसको संभाला। उसने कहा—"बहन तुम इस बात के लिए ज़रा भी चिंता न करो। भगवान तो ध्रुव को अपने समीप बुलाना ही चाहते थे। उन्होंने वह काम तुमसे करवाया। यह भगवान की ही इच्छा थी जो तुम्हारे मुख से बोली। उसने ध्रुव का ही नहीं, हमारा तुम्हारा सबका उपकार किया। हम सभी इसके लिए भगवान के कृतज्ञ हैं कि जिसने तुम्हारे मन में ऐसा विचार पैदा किया। अब हम सब मिलकर उस भगवान की प्रार्थना करें कि वे हमको आगे भी अच्छी बुद्धि और अच्छे विचार दें। हम फिर कोई ग़लती न करें। उनको कभी न भूलें। हमेशा उनको अपने सामने देखते रहें और अपने आचरणों को संभालकर चलें"।

इतनी बातें सुनकर राजा उत्तानपाद, राजकुमार ध्रुव, महारानी सुनीति और सुरुचि सबने घुटनों के बल बैठकर भगवान का स्मरण किया। उनको उनकी इस कृपा के लिए धन्यवाद दिया और प्रार्थना की कि हे भगवान! आगे हमपर ऐसे ही दयालु रहिये, हमपर ऐसी ही दयादृष्टि रखिये कि हम सत्य से न गिरें, पुण्यकर्म करते रहें और आपको न भूलें। हमसे जो अपराध हुए हों उन्हें क्षमा कीजिये।

जब इस प्रकार सब लोग भगवान का स्मरण कर चुके तो राजा ने मंत्री से कहकर हाथी बुलवाया। हाथी पर सोने का हौदा रखा था और मखमल की जड़ाऊ झूल पड़ी थी। उसके दांत सोने से मढ़े थे, उसके गले में सोने और मोतियों की क़ीमती मालाएँ पड़ी थीं। उसका महावत भी सुंदर और क़ीमती पोशाक पहने था। राजा ने कहा—"राजकुमार ध्रुव अपनी माता के साथ इस हाथी पर चढ़कर नगर में प्रवेश करेंगे।"

राजकुमार उत्तम जो अब तक दूर खड़ा खड़ा यह सब लीला देख रहा था, दौड़ा दौड़ा आया और अपने बड़े भाई से गले मिला। उसने भी अपनी माता की सभी करतूत देखी थी। वह यह मानता था कि ग़लती उसकी माता की है, पर

वह सबसे छोटा था। बड़ों की बातों में दखल दे तो कैसे दे? यह तो शिष्टाचार के विरुद्ध है। इसलिए उसने मौन रहकर अपने भाई और बड़ों का सम्मान किया।

जब हाथी सजकर तैयार हुआ, बाजे बजने लगे, ध्वजा और तोरण तैयार हो गये, सेनापति ने राजकुमार ध्रुव के स्वागत में अपनी सेना और अंग-रक्षकों को सलामी देने का हुक्म दिया तो सारा दल एक क़तार में खड़ा हो राजकुमार ध्रुव की जय-जयकार करने लगा। हाथी चलने ही वाला था कि राजकुमार उत्तम ने पिता से कहा—"पिता जी, भैया ध्रुव की छतरी लेकर मैं साथ चलूँगा।" राजा को उत्तम की बात बहुत पसन्द आयी और उन्होंने अनुमति दे दी।

हाथी पर राजकुमार ध्रुव, उसके पास उसकी माता सुनीति और उसके पीछे भाई उत्तम छतरी पकड़े बैठा था। हाथी के आगे प्रधान सेनानायक राज्य की ध्वजा फहराते हुए चल रहे थे। बाजे बज रहे थे। राजा के अंग-रक्षक राजकुमार ध्रुव के आसपास घोड़े पर सवार थे। सेना दोनों तरफ़ दो क़तारों में चल रही थी। पीछे महाराज उत्तानपाद और रानी सुरुचि पालकियों में जा रहे थे। नगर में घुसते ही नगर के बड़े बड़े धनी-मानी नागरिक, उनकी महिलाएँ—

हाथों में फूलों की मालाएँ, चंदन धूप, आरती और नारियल आदि लिये खड़ी थीं। सबने राजकुमार का स्वागत किया। आरती उतारी। फूलों की वर्षा की। राजकुमार ध्रुव ने जयघोष के साथ नगर में प्रवेश किया।

सड़क के दोनों तरफ़ जनता की क़तारें लगी थीं। छतों पर, छज्जों पर नवयुवतियाँ हाथों में फूलों की मालाएँ और रंगे हुए अक्षत और तरह तरह के मेवे लिये खड़ी थीं। जिस तरफ़ राजकुमार ध्रुव का हाथी झूम जाता उसी तरफ़ से फूल, अक्षत और मेवों की वर्षा होने लगती।

राजकुमार ध्रुव भी सिर झुकाये, हाथ जोड़े हुए सबको प्रणाम करते, सबके स्वागत का मुस्कुराते हुए जवाब देते जा रहे थे। इस प्रकार नगर की चारों सड़कों पर घूमकर वे राजमहल के द्वार पर पहुँचे। वहाँ रानी सुरुचि ने ही पहले राजकुमार ध्रुव को तिलक किया, गोद में लेकर हाथी पर से उतारा और उठाकर महल के भीतर ले गयी। उसने राजकुमार ध्रुव के वापस आने की खुशी में ग़रीबों को भोजन कराया, कपड़े दिये, रुपये बाँटे, किसानों को गाय और बैल मुफ्त में दिये, उनका कर माफ़ कर दिया। व्यापारियों का बिन-बिका माल ख़रीद लिया। सभी लोग महारानी सुरुचि की तारीफ़ करते थे। यह सब देखकर सुनीति फूली न समाती

थी। वह अपनी सौत सुरुचि की इच्छा पूरी करने के लिए दौड़-दौड़कर काम करती थी। आज वह महारानी सुरुचि के अधिकार की दासी न थी, उसके प्रेम और आनंदकी दासी थी। आज राजकुमार ध्रुव भी अपनी छोटी माँ के प्रेम से बंधा हुआ हुक्म का बंदा था। कैसी है प्रेम की महिमा?

जब से ध्रुव वापस आ गया तबसे महाराजा उत्तानपाद राजकाज में खूब दिलचस्पी लेने लगे। अक्सर प्रजा की भलाई के काम करते। जहाँ पानी की कमी थी, वहाँ कुएँ खुदवाते, तालाब बनवाते, नहरें खुदवाते। एक गाँव से दूसरे गाँव के लिए सड़कें बनवाते व बाग लगाते। नये नये उद्योग-धंधे खोलने के लिए व्यापारियों की मदद करते। उनकी रक्षा के लिए पुलिस का इंतज़ाम करते। जहाँ तहाँ खुफ़िया रहते और चोर-बदमाशों का पता लगाते। न्यायालय खोलते। गुरुकुलों को सहायता पहुँचाते। यों तरह तरह के काम करके प्रजा को प्रसन्न रखते। प्रजा भी अपने राजा पर जान देने को तैयार थी। राजा का खज़ाना कभी खाली नहीं होता था।

इस तरह राजा को राज करते बहुत वर्ष बीत गये। राजकुमार ध्रुव अब जवान हुआ। राजा के बाल पक गये।

उन्हें बुढ़ापे ने आ घेरा तो एक दिन उन्होंने अपने मंत्री को बुलाकर अपनी इच्छा बतायी । उन्होंने कहा—"आप प्रजा के मत को जानें कि प्रजा का विचार ध्रुव के बारे में क्या है । अगर प्रजा में कोई विरोध न हो तो मैं चाहता हूँ कि ध्रुव को राजसिंहासन देकर मैं वन में जाकर ईश्वर का भजन करूँ । मैं समझता हूँ कि वह अब इस योग्य हो गया है कि राज्य का भार संभाल ले ।

मंत्री ने कहा—"महाराज ने यह अच्छी सोची है । मेरे पास तो प्रजा की तरफ़ से बहुत-से प्रतिनिधि-दल आये हैं । वे राजकुमार के आचरण, उनके प्रजा-प्रेम, राजकाज संभालने का चातुर्य वगैरह से बड़े ही खुश हैं । वे उनकी तारीफ़ करते नहीं थकते । प्रजा तो आपके विचार से बिलकुल सहमत है । अगर आप कहें तो मैं दरबार बुलाऊँ; और आप सभी दरबारियों से पूछ लें । " राजा ने दरबार बुलाने की अनुमति दे दी ।

मंत्री ने दरबार बुलाया । नगर के सभी प्रतिष्ठित लोग, व्यापारी, धनी, जमींदार, सेनानायक, राजव्यवस्था के प्रधान प्रधान अधिकारी, प्रधान न्यायाधिपति तथा अन्यान्य पंडित, विदेश व्यवस्था व व्यवहार से संबंध रखनेवाले राजदूत, विद्या

प्रचारक, प्रधान गुरुकुल के कुलपति तथा उनके अनुयायी किसानों के प्रतिनिधि, मज़दूर-पेशा के लोग, कारीगर और कलाकार सभी प्रकार के समाज के प्रमुख प्रतिनिधि राज दरबार में बुलाये गये।

जब महाराज उत्तानपाद दरबार में पधारे तो राजकुमार ध्रुव उनके पीछे थे। ध्रुव के पीछे राजकुमार उत्तम उनके अंग-रक्षक के रूप में थे। सभी ने महाराज उत्तानपाद और राजकुमार ध्रुव की जय-जयकार की। इस जयकार से सारा आकाश गूँज उठा। सभी लोगों ने अपने अपने आसन से उठकर राजा और राजकुमार का स्वागत किया।

राजा और राजकुमार ने हाथ जोड़कर और सिर झुकाकर सभासदों के स्वागत को स्वीकार किया और सबको बैठने को कहा।

सभी लोग अपने अपने उचित आसन पर बैठ गये तो महाराज ने राज-गुरु से राजा की इच्छा सबको बतलाने को कहा। राज-गुरु ने उठकर कहा—"राजमंत्री, सेनापति, सामंतो, अन्य सभासदो और जन-प्रतिनिधियो! आप को मालूम ही है कि हमारे राजकुमार अब वयस्क हो गये हैं, राजा भी अब काफ़ी बूढ़े हैं। उनकी इच्छा है

कि राजकुमार को राज-काज सौंपकर ईश्वर-भजन में लगें। राजकुमार ध्रुव के बारे में बताने की कोई ज़रूरत नहीं है। हमारे राज्य का कोई किसान ऐसा नहीं होगा जो राजकुमार के प्रजा-हित के कामों को न जानता हो। उनका भगवद्-प्रेम सारी दुनियाँ में अनोखा है। वे अपने से दूसरे को भगवान का ही रूप मानते हैं, और उसकी सेवा करते हैं। हमारे देश में आज न चोर है, न डाकू, न कोई भूखों ही मरता है। न्याय हमारे देश में सस्ता और हर ग़रीब की झोंपड़ी तक पहुँचता है। इसमें किसीके साथ पक्षपात नहीं किया जाता। खेतों में खूब अन्न उपजता है। उद्योग-धंधे खूब बढ़े हैं। विदेशों को हमारा माल जाता है। वहाँ का सोना हमारे यहाँ खूब आ रहा है। हमारा कोई शत्रु नहीं है। सभी पड़ोसी राजा हमसे मित्रता रखते हैं। हमें किसीका डर नहीं। इस तरह हमारा राज्य हर तरह से सुखी और भरा-पूरा है। यह सब हमारे महाराज और राजकुमार की धर्मपरायणता का फल है। हम उनके बड़े कृतज्ञ हैं। अब आप सबकी राय हो तो महाराज राजपाट का भार राजकुमार को सौंपकर शांति के साथ भगवान के भजन में लग जावें।"

राजगुरु का प्रस्ताव सुनकर सारे दरबार में एक ही आवाज़ सुनायी पड़ती थी—"साधु! साधु !! साधु !!! यह बड़ा ही उत्तम प्रस्ताव है। हम हृदय से राज-गुरु के प्रस्ताव को मानते हैं। हमारी सबकी सम्मति है। महाराज को बधाई है। राजकुमार को बधाई है। हम भी ऐसे राजा और राजकुमार को पाकर अपने को धन्य समझते हैं। हम आज बड़े भाग्यवान हैं। ईश्वर हमारे राजा और राजकुमार को चिरायु दें।

जब राजा ने देखा कि प्रजा सर्वसम्मति से ध्रुव को राजा बनाना चाहती है तो बड़े ही प्रसन्न हुए। उन्होंने राज-गुरु और मंत्रियों से राजकुमार ध्रुव को राज-पद देने की आज्ञा दे दी।

मंत्रियों ने सारे राज्य में ढिंढोरा पिटवा दिया कि अमुक शुभ समय पर राजकुमार ध्रुव का राजतिलक होगा।

निश्चित दिन आने पर राजतिलक के लायक राज-दरबार सजाया गया। पास-पड़ोस के राजा लोग निमंत्रण पाकर राजतिलक के उत्सव में शामिल होने आये। सारे राज्य से प्रजा की ओर से भेंट ले-लेकर प्रतिनिधिगण आ-आकर जमा होने लगे। नगर का प्रत्येक दरवाज़ा, प्रत्येक गली और सड़क अपने अपने ढंग से सजायी गयी थी। सुमंगलियों ने

अपने दरवाज़ों पर चौक पूरे। अपने अपने घर पर मंगल साज सजाये। गाना-बजाना किया।

इस शुभ और मंगल उत्सव के लिए खास दरबार किया गया और महाराज उत्तानपाद ने राज-गुरु की अनुमति से राजकुमार ध्रुव का राजतिलक किया। दस्तूर के माफ़िक मंत्रियों, सामंतों, रईसों और प्रजा के प्रमुख लोगों ने आ-आकर नये महाराज ध्रुव को अदब के साथ प्रणाम किया और भेंटें चढ़ायीं। महाराज ने राजतिलक के उपलक्ष्य में अपने सभी कर्मचारियों को एक महीने का वेतन पुरस्कार स्वरूप दिया। मंत्रियों और सामंतों को खिलअतें बाँटी। प्रजा का एक साल का कर माफ़ कर दिया। ब्राह्मणों और योग्य पढ़े-लिखे विद्वानों का उनके योग्य धन, कपड़े और भेंटें दीं। सेना ने नये राजा के प्रति राजभक्ति की सलामी दीगी। इस प्रकार महाराज ध्रुव ने राज का संचालन शुरू किया।

राजा उत्तानपाद बूढ़े तो हो ही गये थे। अब पुत्र को राजभार सौंपकर छुट्टी पायी। उन्होंने ध्रुव के राज-व्यवहार से प्रजा को खुश देखा तो आप भगवान का भजन करने वन को चले गये।

TCG

RAJAPPAN

1953 1954

आदर्श चरित्र

लेखक
पं. रघुवरदयालु मिश्र

दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा
मद्रास

Price 6 As.

1953

PUBLISHED BY
TRAVANCORE-COCHIN GOVT.

Indic Digital Archive Foundation
gpura.org